☐ श्री गोटूलाल मांडोत 'निर्मल'
[रायपुर]

तप एक ज्योति है, एक ज्वाला है। आत्मा से संलग्न कर्म कालुष्य को भस्मसात् कर उसके तेजस स्वरूप को निखारने वाले उस अग्नितत्व-तपःसाधना की विचित्र प्रक्रियाएँ जैन-धर्म में प्रचलित हैं। तप के उन विविध स्वरूपों की एक रूपवाही व्याख्या यहाँ पढ़िए :

जैन साधना में तप के विविध रूप

[एक संकलन]

☐

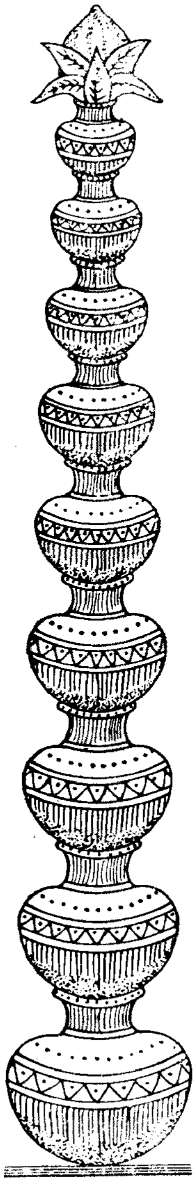

नव तत्त्वों में कर्मों को क्षय करने वाला तत्त्व निर्जरा है। आत्मा से कर्म-वर्गणाओं का पृथक् होना निर्जरा कहलाता है। निर्जरा के सामान्यतः बारह भेद हैं। ये ही बारह भेद तपस्या के माने जाते हैं, इनका क्रमशः नामोल्लेख इस प्रकार है-(१) अनशन, (२) ऊनोदरी, (३) भिक्षाचर्या, (४) रसपरित्याग, (५) कायक्लेश, (६) प्रति संलीनता (७) प्रायश्चित, (८) विनय, (९) वैयावृत्य, (१०) स्वाध्याय, (११) ध्यान और (१२) व्युत्सर्ग।

इनमें से प्रथम छह बाह्य तप के तथा अन्तिम छह आभ्यंतर तप के भेद हैं। तपों के ये बारह भेद आत्मा को मोक्ष तक पहुँचाने में आगम सम्मत सीढ़ियाँ हैं बाह्य तपों में आत्मा जब शरीर को समर्पित कर देती है तो वह इतनी निर्मल बन जाती है कि वह आभ्यंतर तप को सहज ही स्वीकार कर लेती है।

जैनागमों में तप को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। उत्तराध्ययन सूत्र में लिखा है-"**भव कोडि संचियं कम्मं तवसा निज्झरिज्जई**" करोड़ों भवों में संचित कर्म तपस्या से नष्ट किये जाते हैं। तप के इन बारह भेदों पर जैन साहित्य में विपुल वर्णन उपलब्ध है, प्रस्तुत निबन्ध में तप के प्रथम स्थान अनशन पर ही विवेचनात्मक विचार प्रस्तुत किये जा रहे हैं—

आहार चार प्रकार के माने गए हैं—

१. **अशन**—अन्न से निर्मित वस्तुएँ, सभी पक्वान्न आदि।

२. **पान**—पानी।

३. **खादिम**—दाख, बादाम आदि सूखा मेवा।

४. **स्वादिम**—चूर्ण, चटनी आदि मुखवास की चीजें।

इन चार प्रकार के आहार का त्याग करना अथवा पान (पानी) को छोड़कर शेष तीन आहारों का त्याग करना अनशन कहलाता है।

अनशन के मुख्य दो भेद हैं—इत्वरिक और यावत्कथिक।

इत्वरिक—अल्पकाल के लिये जो उपवास किया जाता है उसे इत्वरिक अनशन कहते हैं, इसके निम्न चौदह भेद हैं—

१. चतुर्थ भक्त, २. षष्ठ भक्त, ३. अष्कम भक्त, ४. दशम भक्त, ५. द्वादश भक्त, ६. चतुर्दश भक्त, ७. षोडश भक्त, ८. अर्द्धमासिक, ९. मासिक, १०. द्विमासिक, ११. त्रिमासिक, १२. चातुर्मासिक, १३. पंचमासिक, १४. षाण्मासिक।

इनका संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है—

जिस उपवास के पहले दिन एक समय के भोजन का, दो समय उपवास के दिन का और पारणे के दिन एक समय के भोजन का त्याग किया जाता है उसे चतुर्थ भक्त कहते हैं। आजकल व्यवहार में चारों समय आहार का त्याग

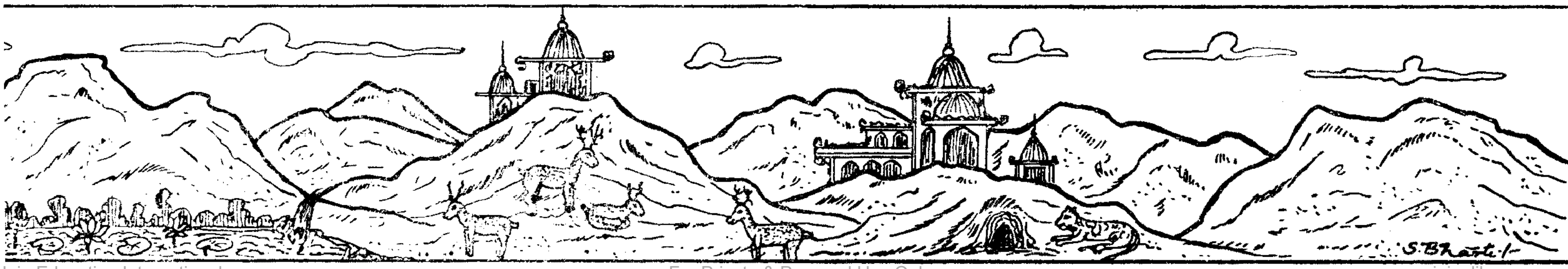

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

न होने पर भी तथा केवल उपवास के दिन के दोनों समय आहार का त्याग करने पर भी उपवास मान लिया जाता है। वस्तुतः चतुर्थ भक्त ही उपवास की संज्ञा है, इसी प्रकार षष्ठ भक्त से तात्पर्य बेला यानि दो उपवास तथा अष्ठम भक्त यानि तेला से है। कहा है—चतुर्थमेकेनोपवासेन षष्ठं द्वाभ्यां अष्टमं त्रिभिः।

यावत्कथिक—जो अनशन अल्प समय के लिये नहीं किया जाता है उसे यावत्कथिक अनशन कहते हैं—इसके तीन भेद हैं—(१) पादपोपगमन, (२) भक्त प्रत्याख्यान, (३) इंगित मरण।

पादपोपगमन—पादप का अर्थ वृक्ष है, जिस प्रकार कटा हुआ वृक्ष अथवा वृक्ष की कटी हुई डाली हिलती नहीं, उसी प्रकार संथारा करके जिस स्थान पर जिस रूप में एक बाद लेट जाय फिर उसी जगह उसी रूप में लेटे रहने पर मृत्यु को प्राप्त हो जाना पादपोपगमन मरण है। इसमें हाथ-पैर हिलाने का आगार भी नहीं होता है। इसमें चारों आहार का त्याग करके अपने शरीर के किसी भी अंग को किंचित मात्र भी न हिलाते हुए निश्चय रूप से संथारा करना पादपोपगमन कहलाता है। पादपोपगमन के दो भेद हैं—(१) व्याघातिम (२) निर्व्याघातिम।

सिंह, व्याघ्र, अग्नि आदि का उपद्रव होने पर जो संथारा किया जाता है वह व्याघातिम पादपोपगमन संथारा कहलाता है। तीर्थंकर महावीर के दर्शनार्थ जाते हुए सुदर्शन ने अर्जुनमाली के शरीर में रहे यक्ष से आते उपसर्ग को जान यही अनशन स्वीकार किया था।

जो किसी भी प्रकार के उपद्रव के बिना स्वेच्छा से संथारा किया जाता है वह निर्व्याघातिम पादपोपगमन संथारा कहलाता है।

भक्त प्रत्याख्यान—यावज्जीवन तीन या चारों आहारों का त्याग कर जो संथारा किया जाता है उसे भक्त-प्रत्याख्यान अनशन कहते हैं इसी को भक्त परिज्ञा भी कहते हैं।

इंगित मरण—यावज्जीवन पर्यन्त चारों प्रकार के आहार का त्याग कर निश्चित स्थान में हिलने-डुलने का आगार रखकर जो संथारा किया जाता है, उसे इंगित मरण अनशन कहते हैं, इसे इङ्गिनीमरण भी कहते हैं। इंगित मरण संथारा करने वाला अपने स्थान को छोड़कर कहीं नहीं जाता है एक ही स्थान पर रहते हुए हाथ-पैर आदि हिलाने का उसे आगार रहता है वह दूसरों से सेवा भी नहीं करवाता है।

उपरोक्त तीनों प्रकार के संथारा (अनशन), निहारिम और अनिहारिम के भेद से दो तरह के होते हैं, निहारी संथारा नगर आदि के अन्दर और अनिहारी ग्राम-नगर आदि से बाहर किया जाता है।

अनशन तप के दूसरी तरह से और भी भेद किये जाते हैं।

इत्वरी अनशन तप के छह भेद हैं—श्रेणी तप, प्रतर तप, घन तप, वर्ग तप, वर्ग वर्ग तप और प्रकीर्णक तप। श्रेणी तप आदि तपश्चर्याएँ भिन्न-भिन्न प्रकार से उपवासादि करने से होती हैं।

यावत्कथिक अनशन के काय चेष्टा की अपेक्षा से दो भेद हैं। क्रिया सहित (सविचार) और क्रिया रहित (अविचार), अथवा सपरिकर्म (संथारे में सेवा कराना) और अपरिकर्म (संथारे में सेवा नहीं करवाना)।

इत्वरिक अनशन के श्रेणी तप आदि का विस्तार से निम्नोक्त वर्णन किया जा रहा है—

१. **नमुक्कार सहिअं** (नवकारसी) सूर्योदय से दो घड़ी के बाद नवकार मन्त्र न कहे तब तक चारों आहारों का त्याग प्रथम और द्वितीय इन दो आगारों से किया जाता है। (आगारों की क्र० सं०, नाम और अर्थ इसी निबन्ध में आगे दिये जा रहे हैं)।

२. **पौरिसियं (पौरिसी)** सूर्योदय से लेकर प्रहर तक (दिन के चौथे भाग तक चारों आहारों का त्याग करना पौरिसियं प्रत्याख्यान कहलाता है इसमें आगार संख्या एक से छह तक की होती है।

३. **साड्ढ पौरिसियं**—(डेढ़ पौरिसी) सूर्योदय से लेकर एक डेढ़ प्रहर तक चारों आहारों का त्याग करना डेढ़ पौरिसी प्रत्याख्यान कहलाता है। पौरिसियं वाले सभी आगार इसमें होते हैं।

४. **पुरिमढं** (दो पौरिसी)—सूर्योदय से लेकर दोपहर तक चारों आहारों के त्याग करने के पुरिमड्ढ प्रत्याख्यान कहते हैं। इसमें पूर्वोक्त ६ के अतिरिक्त महत्तरागोरणं आगार विशेष होता है।

५. **तीन पौरिसी** (अवड्ढ) सूर्योदय से लेकर तीन पहर तक चारों आहारों का त्याग अवड्ढ प्रत्याख्यान कहलाता है इसमें पूर्वोक्त ७ आगार होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपरोक्त पाँचों त्यागों को लेने के लिये निम्न पाठ बोलते हैं—उग्गएसूरे............(प्रत्याख्यान का नाम) पच्चक्खामि चउव्विहंपि आहारं असणं पाणं खाइमं साइमं............(आगारों के नाम) वोसिरामी, जहाँ प्रत्याख्यान देने वाले गुरु महाराज या बड़े श्रावक जी हों तो लेने वाले को वोसिरामि बोलना चाहिये क्योंकि देने वाले वोसिरे शब्द का उच्चारण करते हैं। स्वयं ही प्रत्याख्यान लेने पर वोसिरामि शब्द का उच्चारण करना है।

६. **एगासणं (एकासन)**—पौरिसी या दो पौरिसी के बाद दिन में एक बार एक ही आसन से भोजन करने को एकासन प्रत्याख्यान कहते हैं इसमें पूर्वोक्त सात तथा सागारिआगारे णं आगार विशेष होता है।

७. **बे आसणं (दो आसन)**—पौरिसी या दो पौरिसी के बाद दिन में एक बार दो आसन से भोजन करने को बे आसणं प्रत्याख्यान कहते हैं दिन में दो बार भोजन के सिवाय मुंह में कुछ न खाने को भी बे आसण प्रत्याख्यान कहते हैं इसमें पूर्वोक्त आठ आगार होते हैं। एगासन और बेआसन में चारों आहारों में से धारणा पूर्व त्याग किया जाता है यानि एकासन और बे आसन के बाद स्वादिम और पानी लेना हो तो दुविहंपि कहना चाहिये।

८. **एगट्ठाणं (एक स्थान)**—एगलठाणा और एकासना के त्याग मिलते-जुलते हैं परन्तु आउट्ठण पसारेणं का आगार नहीं रहता है अर्थात् मुँह और हाथ के सिवाय अंगोपांग का संकोचन—प्रसारण नहीं करते हैं। 'सव्व समाहि-वत्तियागारेणं' रोगादि की शान्ति के लिये भी औषधादि नहीं लेवे इस आगार का भी पालन यथासम्भव किया जाता है।

९. **तिविहार उपवास**—पानी के सिवाय तीन आहारों का त्याग करने पर तिविहार उपवास होता है। तिविहार उपवास में पानी के कुछ विशेष आगार होते हैं। जैसे लेप वाला दूध या छाछ के ऊपर वाला, अन्न के कणों से युक्त तथा धोवन आदि। इसमें आगार सं० १, २, ६, ७ और ११वां होते हैं।

१०. **चउविहार उपवास**—चारों आहारों का त्याग करने पर चउविहार उपवास होता है इसमें आगार सं० १, २, ६, ७, ११ होते हैं।

११. **अभिग्रह**—उपवास के बाद या बिना उपवास के भी अपने मन में निश्चय कर लेना कि "अमुक बातों के मिलने पर ही पारणा या आहार ग्रहण करूँगा" इस प्रकार द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की प्रतिज्ञा विशेष को अभि-ग्रह कहते हैं। सारी प्रतिज्ञाएँ मिलने पर ही पारणा किया जाता है। इसमें आगार सं० १, २, ६, ७ होते हैं। अभिग्रह में जो बातें धारण करनी हों उन्हें मन में या वचन द्वारा गुरु के समक्ष निश्चय करके दूसरों के विश्वास के लिये एक पत्र में लिख देना चाहिये। प्रभु महावीर को चन्दनबाला द्वारा दिया गया उड़द के बाकुले का दान अभिग्रह का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है।

१२. **दिवस चरिम**—सूर्य अस्त होने से पहले से दूसरे दिन सूर्योदय तक चारों या तीनों आहारों का त्याग करना दिवस चरिम प्रत्याख्यान है इसमें अभिग्रह के चारों आगार हैं।

१३. **भव चरिम** (यावज्जीवन का त्याग) त्याग करने के समय से लेकर यावज्जीवन तीनों या चारों आहारों का त्याग करना भव चरिम प्रत्याख्यान कहलाता है। इसमें पूर्वोक्त चारों आगार हैं किन्तु घटाये जा सकते हैं।

१४. **आयम्बिल**—पौरिसी या दो पौरिसी के बाद दिन में एक बार नीरस और विगयों से रहित आहार करने को आयम्बिल (आचाम्ल) प्रत्याख्यान कहते हैं इसमें आगार सं० १, २, ६, ७, ११, १२, १३ और १४ होते हैं।

१५. **नीवी**—(निव्विगइयं) विकार उत्पन्न करने वाले पदार्थों को विकृति (विगय) कहते हैं। दूध, दही आदि भक्ष्य तथा मांसादि अभक्ष्य विकृतियाँ हैं। श्रावक के अभक्ष्य विकृतियों का तो त्याग ही होता है और भक्ष्य विकृतियों को छोड़ना निर्विकृतिक (निव्वीगय) तप कहलाता है। इसमें आयम्बिल के अलावा पडुच्चमक्खिएणं आगार विशेष होता है। किसी विगय का त्याग करने पर विगईप्रत्याख्यान तथा समस्त विगय का त्याग करने पर निविगइ प्रत्याख्यान कहते हैं।

१६. **गंठि सहियं मुट्ठिसहियं**—चद्दर डोरा आदि के गांठ देकर जहाँ तक न खोले वहाँ तक चारों आहारों के त्याग करने पर गंठि सहियं तथा मुट्ठी के बीच अंगूठा रहे वहाँ तक आहार त्याग को मुट्ठी सहियं कहते हैं। अंगूठी आदि के आगार रहते हैं। ऐसे ही संकल्प अन्य भी होते हैं।

आजकल घण्टे-घण्टे के प्रत्याख्यान भी किये जाते हैं। छोटी डायरियों में पन्नों पर कई खाने बनाकर उनमें घण्टों के त्यागानुसार चिह्न लगा देते हैं, बाद में उन्हें जोड़ लिया जाता है। जिह्वा की स्वाद-लोलुपता पर आंशिक नियंत्रण का यह भी बेजोड़ साधन है।

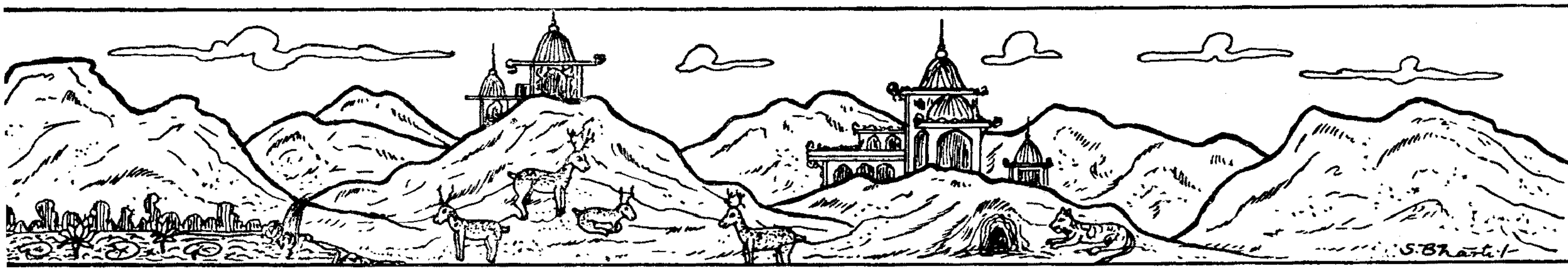

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आगारों के अर्थ

१. अन्नत्थणाभोगेणं—भूल से (बिना उपयोग से) अज्ञात अवस्था में कोई भी वस्तु मुख में डालने से त्याग नहीं टूटते हैं। यदि प्रत्याख्यान याद आने से तुरन्त थूक देवे तो भी त्याग में दोष नहीं आता है, बिना जाने खा लिया, बाद में स्मरण हो जाने पर भी दोष नहीं लगता है किन्तु शुद्ध व्यावहारिकता के लिए प्रायश्चित्त लेकर निशंक होना जरूरी है।

२. सहस्सागारेणं—जो त्याग लिये हुए हैं वे याद तो जरूर हैं परन्तु आकस्मिक स्वाभाविक रूप से दधि-मंथन करते मुख में बूँद गिर जाय अथवा गाय-भैंस को दोहते, घृतादिक मंथन करते, घृतादिक तोलते, अचानक पदार्थ मुख में आ जाए, वर्षा की बूँदें चौविहार उपवास में भी मुख में पड़ जावे तो भी त्याग भंग नहीं होते हैं।

३. पच्छन्नकालेणं—काल की प्रच्छन्नता अर्थात मेघ, ग्रह, दिग्दाह, रजोवृष्टि, पर्वत और बादलादि से सूर्य ढक जाने पर यथातथ्य काल की मालूम न हो उस समय बिना जाने अपूर्ण काल में खाते हुए भी त्याग भंग नहीं होता।

४. दिशा मोहेणं—दिशा का मूढ़पना अर्थात् दृष्टि विपर्याय से अजानपूर्वक पूर्व को पश्चिम और पश्चिम को पूर्व समझ के भोजन करे, खाने के बाद दिशा ज्ञान हो तो भी व्रत भंग नहीं होता है।

५. साहूवयणेणं—साधुजी (आप्त पुरुष या आगम ज्ञानी) के वचन—पहर दिन चढ़ गया ऐसा सुनकर आहार करे तो त्याग भंग नहीं होता है।

६. सव्वसमाहिवत्तियागारेणं—सर्व प्रकार की समाधि रखने के लिए अर्थात् त्याग करने के पश्चात् शूलादिक रोग उत्पन्न हुए हों या सर्पादिकों ने डंक दिया हो, उन वेदनाओं से पीड़ित होकर आर्तध्यान करे तब सर्व शरीरादिक की समाधि के लिए त्याग पूर्ण नहीं होने पर भी औषधादिक ग्रहण करे तो उसका नियम भंग नहीं होता है। उपशान्ति (समाधि) होने पर यथातथ्य नियम पालना कर ली जाती है।

७. महत्तरागारेणं—महत् आगार यानि बड़ा आगार जैसे कोई ग्लानादिक की वैयावच्च के लिए या अन्य से कार्य न होता हो तो गुरु या संघ के आदेश से समय पूर्ण हुए बिना ही आहार करे तो नियम भंग नहीं होता है। कोई भी बड़ा कार्य यानि त्याग किये हुए हैं उनसे भी अधिक निर्जरा के लाभ का कोई कार्य हो ऐसी स्थिति में महत्तरागारेणं रखा गया है।

८. सागारियागारेणं—साधु आहार के लिए बैठे हुए हैं वहाँ पर अचानक कोई गृहस्थ आ जाते हैं तो उनके सामने आहार ग्रहण नहीं किया जाता है। यदि गृहस्थ वहाँ स्थित रहा हुआ जाना जाय या गृहस्थ की दृष्टि आहार पर पड़ती हो तो वहाँ से उठकर अन्य स्थान पर जाकर आहार करें, क्योंकि गृहस्थ के सामने आहार ग्रहण करने से प्रवचन घातिक महत्दोष सिद्धान्त में कहे हैं। गृहस्थ एकासन करने बैठा हो, उस समय सर्प आता हो, अकस्मात अग्नि लगी हो मकान गिरता हो, पानी आदि का बहाव आता हो तो भी वहाँ से उठकर अन्य स्थान पर जाते हुए भी एकासनादि नियम भंग नहीं होता है।

९. आउट्टणपसारेणं—भोजन करते समय हाथ-पैर और अंगोपाङ्गादिक संकोचते या पसारते आसन से चलित हो जाय तो नियम भंग नहीं होता है।

१०. गुरु अब्भुट्ठाणेणं—एकासन करते समय गुरु, आचार्य, उपाध्याय और मुनिराज पधार जायें तो उनकी विनय भक्ति के लिए उठ-बैठ करने पर भी नियम भंग नहीं होता है।

११. पारिठावणियागारेणं—निर्दोष रीति से ग्रहण किया हुआ आहार शास्त्रोक्त रीति से खाने के बाद भी अधिक हो जाय तथा उस स्निग्ध विगयादिक आहार को डालने से जीव विराधानादिक कई दोष उत्पन्न हो जायें यह जान के शेष बचे हुए आहार को गुरु की आज्ञा से एकासनादि तप से लेकर उपवास पर्यन्त तप धारक साधु उस आहार को ग्रहण करे फिर भी नियम भंग नहीं होता है यह आगार साधुजी के लिए ही माना गया है।

१२. लेवालेवेणं—घृतादिक से हाथ अथवा वर्तन के कुछ अंश भोजन में लगे उसे लेप कहते हैं। वस्त्रादि से उसे पोंछ लेने पर लेप दृष्टिगत न हो उसे अलेप कहते हैं। ऐसे लेप और अलेप वाले बर्तनों में भोजन लेने से नियम भंग नहीं होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३. **गिहत्थ संसट्ठेणं**—विगयों से भरे हाथ, चम्मच आदि से आहार दिया-लिया जाने पर भी नियम भंग नहीं होता है।

१४. **उक्खितविवेगेणं**—ऊपर रखे हुए गुड़, शक्कर आदि को उठा लेने पर भी उनका अंश जिसमें लगा रह गया हो ऐसे आहार को लेने से नियम भंग नहीं होता है।

१५. **पडुच्चमक्खिएणं**—रोटी आदि पदार्थ को नरम बनाने के लिए घी, तैल आदि लगाए गये हों तो वह आहार लेने से नियम भंग नहीं होता है।

श्री भगवती सूत्र के सातवें शतक के आठवें उद्देशक में सर्व उत्तर गुण पच्चक्खाण के दस भेद इस प्रकार किये गये हैं—

१. **अणागय**—चतुर्दशी आदि के दिन तप करना हो उस दिन यदि आचार्यादिक की विनय वैयावृत्यादि कराना हो तो एक दिन पहले तप करे उसे अनागत कहते हैं।

२. **मइक्कंतं**—आचार्यादिक की वैयावृत्यादि करने के बाद तप करे सो अतिक्रांत तप है।

३. **कोडीसहियं**—आदि, अन्त और मध्य में लिए हुए तप को अनुक्रम से पूर्ण करना कोडीसहियं तप कहलाता है।

४. **नियंठियं**—अमुक दिन तप ही करूँगा, उसे नियन्त्रित कहते हैं।

५. **सागार**—आगार सहित तप करने को सागारिक तप कहते हैं।

६. **अनागारं**—बिना आगार का तप अणागारिक तप कहलाता है।

७. **परिमाणकडं**—अमुक दिन तक ऐसा ही तप करूँगा सो परिमाणकृत तप कहलाता है।

८. **निरवसेसं**—सर्वथा आहारादिकों के त्याग करने को निर्विशेष तप कहते हैं।

९. **संकियं**—गंठी-मुट्ठी आदि के त्याग करने को संकेत प्रत्याख्यान कहते हैं।

१०. **अद्धाए**—नमुक्कारसी-पोरिसी आदि को अद्धा तप कहते हैं।

'पच्चक्खाणंभवे दसहा' इस प्रकार पच्चक्खाण दस प्रकार से होता है।

अतिचार

तप के ५ अतिचार हैं उनका संक्षिप्त अर्थ इस प्रकार है—

१. **इहलोगासंसप्पऊगे**—इस लोक में ऋद्धि प्राप्त करने के लिए तप करना प्रथम अतिचार है।

२. **परलोगासंसप्पऊगे**—परलोक के लिए इन्द्रादि सुखों की इच्छा से तप करे यह द्वितीय अतिचार है।

३. **जीवियासंसप्पऊगे**—अपनी महिमा देख जीने की इच्छा से तप करे यह तृतीय अतिचार है।

४. **मरणासंसप्पऊगे**—महिमा न हो ऐसा जान मरने की इच्छा से तप करे यह चतुर्थ अतिचार है।

५. **कामभोगासंसप्पऊगे**—काम-भोग प्राप्त करने की इच्छा से तप करे यह पंचम अतिचार है।

इन अतिचारों को जानकर निष्काम भाव से तपाराधना की जानी चाहिए। की गई तपस्या का निदान कभी नहीं करना चाहिए।

ज्ञान, दर्शन और चारित्र की अभिवृद्धि के लिए कई तिथियों पर विशेष तप प्रारम्भ किये जाते हैं। संक्षेप में कनकावली आदि तपों का तथा पर्व और व्रतों की तिथियों का वर्णन (जिन तिथियों पर अनशन तपाराधना की जाती है) किया जा रहा है।

(१) **रत्नावली तप**—रत्नावली तप की एक लड़ी में एक वर्ष, तीन महीने और बावीस दिन लगते हैं जिनमें से तीन सौ चौरासी दिन उपवास के और अठ्यासी दिन पारणे के, यों कुल चार सौ बहत्तर दिन होते हैं। इसकी विधि इस प्रकार है।

उपवास करके पारणा, फिर बेला करके पारणा, तेला करके पारणा, पारणा करके आठ बेले किए जाते हैं। इसके बाद उपवास→पारणा→बेला→पारणा इस तरह अन्तर से सोलह तक उपवास करके चौंतीस बेले किए जाते हैं। फिर जिस क्रम से तपस्या प्रारम्भ की थी उसके विपरीत लड़ी में उपवास तक उतरा जाता है। फिर आठ बेले करके पारणा→बेला→पारणा→बेला→पारणा→उपवास किया जाता है। रत्नावली तप की चार लड़ियां की जाती हैं, दूसरी लड़ी में विगयों का त्याग रहता है, तीसरी लड़ी के पारणों में लेप वाले पदार्थों का भी त्याग रहता है तथा चौथी लड़ी के पारणों में आयम्बिल किए जाते हैं।

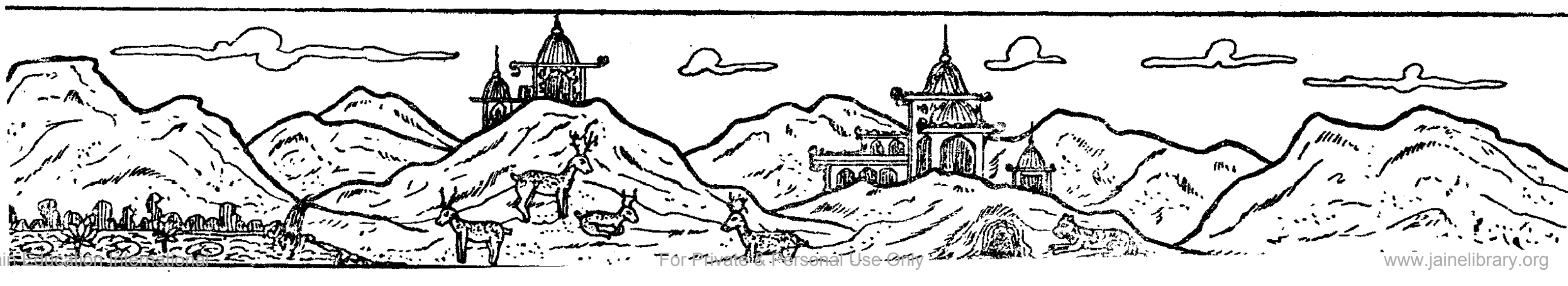

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२) **कनकावली तप**—रत्नावली तप में जहां तीन बेले किए जाते हैं वहाँ कनकावली में तीन तेले किए जाते हैं। इसकी एक लड़ी में एक वर्ष, पाँच महीने और बारह दिन लगते हैं। जिसमें से अठासी दिन पारणे के और एक वर्ष दो महीने और चौदह दिन तपस्या के होते हैं। इसकी भी चार लड़ी होती है तथा ३४ बेलों की जगह भी ३४ तेले किए जाते हैं।

(३) **लघुसिंहनिष्क्रीड़ित तप**—इसमें तेंतीस दिन तो पारणे के तथा पाँच महीने चार दिन की तपस्या एक लड़ी में होती है।

(४) **महासिंहनिष्क्रीड़ित तप**—इसमें इकसठ दिन तक पारणा किया जाता है तथा एक वर्ष चार माह और सत्रह दिन अर्थात् चार सौ सत्तानवें दिन तपस्या के होते हैं। इस तप की भी चार लड़ी की जाती है।

(५) **सप्त-सप्तमिका तप**—सात दिन तक नित्यप्रति एक वक्त में रोटी का पाव हिस्सा और एक बार की धारा में जितना पानी आता हो उतना ही उस रोज खाते-पीते हैं। यही क्रम सात दिन तक रखा जाता है। दूसरे सप्ताह में दो बार भोजन में पाव-पाव रोटी व इसी तरह पानी ग्रहण करना, इसी तरह क्रमशः तीसरे सप्ताह में तीन बार······सातवें सप्ताह में सात बार गृहस्थों द्वारा दिए गए भोजन और पानी को ग्रहण कर उसी पर अपने प्राणों की प्रतिपालना की जाती है इसे ही सप्त-सप्तमिका भिक्षु पडिमा कहते हैं।

अष्टम-अष्टमिका आदि तप—सप्तम-सप्तमिका तप की तरह ही अष्टम-अष्टमिका तप किया जाता है, अन्तर केवल इतना ही है कि यह आठ सप्ताह तक किया जाता है। नवम-नवमिका नौ सप्ताह तक तथा दशम-दशमिका—दस सप्ताह तक किया जाता है।

(६) **लघु सर्वतोभद्र तप**—सर्वप्रथम उपवास→पारणा→बेला→पारणा→तेला यों चोला, पंचोला, तेला, चोला, पंचोला, उपवास, बेला, पंचोला, उपवास, बेला, तेला, चोला, बेला, तेला, चोला, पंचोला, उपवास चौला, पंचोला उपवास, बेला और तेला किया जाता है इसमें पचहत्तर दिन तपस्या के तथा पच्चीस दिन पारणे के होते हैं। इस तप की भी चार लड़ियां होती हैं।

(७) **महासर्वतोभद्र तप**—इस तप की एक परिपाटी करने में तपस्या के दिन १९६ लगते हैं और पारणे के दिन ४९ होते हैं यों एक परिपाटी में कुल दो सौ पैंतालीस दिन लगते हैं इसका चित्र इस प्रकार है—

१	२	३	४	५	६	७
४	५	६	७	१	२	३
७	१	२	३	४	५	६
३	४	५	६	७	१	२
६	७	१	२	३	४	५
२	३	४	५	६	७	१
५	६	७	१	२	३	४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(८) **भद्रोत्तर तप**—एक परिपाटी में एक सौ पिचहत्तर तपस्या के तथा पच्चीस दिन पारणे के होते हैं इस का क्रम इस प्रकार है—

५	६	७	८	९
७	८	९	५	६
९	५	६	७	८
६	७	८	९	५
८	९	५	६	७

(९) **मुक्तावली तप**—इसमें उपवास करके पारणा, फिर बेला करके पारणा, फिर उपवास करके पारणा, तेला करके पारणा, फिर उपवास। इस तरह एक-एक उपवास के अन्तर से सोलह तक पहुँचते हैं, फिर उसी क्रम से उतरकर उपवास तक आया जाता है। इसकी एक परिपाटी में उनसाठ दिन पारणे के तथा दो सौ छियासी दिन तपस्या के होते हैं।

(१०) **आयम्बिल वर्द्धमान तप**—इसमें एक आयम्बिल दूसरे दिन उपवास, फिर दो आयम्बिल—उपवास→तीन आयम्बिल—उपवास→चार आयम्बिल—उपवास—यों बीच-बीच में उपवास करते हुए सौ तक आयम्बिल किए जाते हैं तपस्या की इस एक लड़ी में चौदह वर्ष, तीन मास और बीस दिन लगते हैं।

(११) **बृहद ज्ञान पञ्चमी तप**—प्रत्येक माह की शुक्ला पंचमी को लगातार साढ़े पाँच वर्ष तक व्रताराधना सम्यक् ज्ञान प्राप्ति के लिए की जाती है। कार्तिक शुक्ला पंचमी को तो अवश्य ही व्रत किया जाना चाहिए। तप पूर्ति पर ज्ञानोपकरण प्रदान किए जाने चाहिए। 'ओ३म् ह्रीं श्रीं नमो नाणस्स' पद का सवा लक्ष जाप किया जाना श्रेयस्कर है।

(१२) **रोहिणी तप**—रोहिणी नक्षत्र के दिन उपवास, नीविगय या आयम्बिल से सात वर्ष सात मास तक यह व्रत किया जाता है।

(१३) **वर्षी तप व्रत विधि**—३६० उपवास फुटकर या उपवासों को एकान्तर कर दो वर्ष में इस तप को पूरा किया जाता है अक्षय तृतीया को इसका पारणा किया जाता है।

(१४) **दश प्रत्याख्यान तप**—नमोकारसी १, पोरसी २, साठ पोरसी ३, पुरिमड्ढ ४, एकासना ५, नीवी ६, एगलठाणा ७, दात्त ८, आयम्बिल ९, उपवास फिर १० अभिग्रह इस प्रकार दश विधि प्रत्याख्यान की आराधना की जाती है।

(१५) **ढाई सौ प्रत्याख्यान तप**—२५ नमोकारसी, २५ पोरसी, २५ डेढ़ पोरसी, २५ एकासना, २५ एकलठाणा, २५ नीविगय, २५ आयम्बिल, २५ अभिग्रह और २५ पौषधोपवास तप करने पर ढाई सौ प्रत्याख्यान तप पूरा होता है।

(१६) **चन्दनबाला तप व्रत**—साधु-साध्वीजी का समागम अपने क्षेत्र में होने पर ही यह व्रत करना लाभदायक रहता है क्योंकि सुपात्र दान देने के लिए ही यह तप किया जाता है। अष्टम भक्त (तेला) करके चौथे दिन (पारणे के दिन) मुनिराज को गोचरी बहिरा कर उड़द का बाकुले का पारणा करना चाहिए। आयम्बिल का प्रत्याख्यान करना

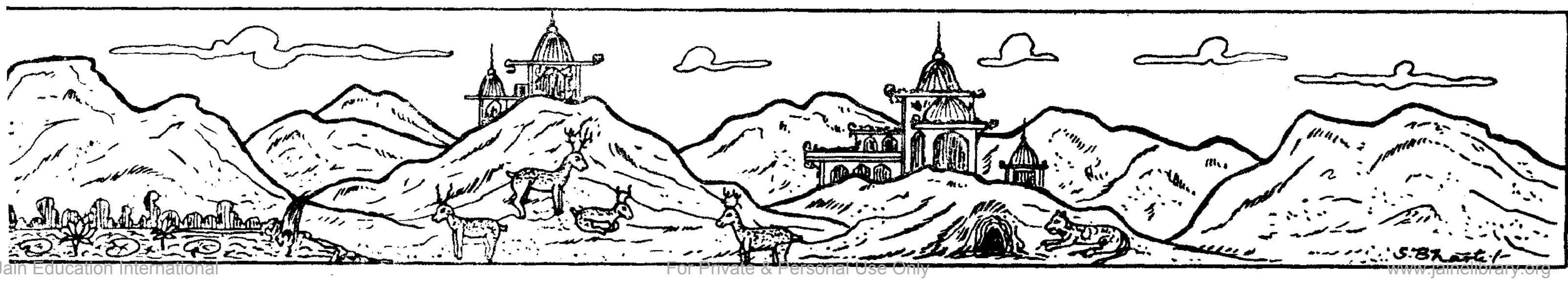

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चाहिए। हाथ में सूत की आंटी डालकर तथा सूपड़े में उड़द का बाकुला रखकर भी दान दिया जा सकता है। संघ स्नेह का कार्य अवश्यमेव किया जाना चाहिए।

(१७) **पचरंगी तप**—पहले दिन पांच पुरुष या स्त्रियाँ उपवास या आयम्बिल या दया व्रत करे, दूसरे दिन वे पाँच तथा अन्य, तीसरे दिन पाँच और इस तरह पाँचवें दिन २५ ही व्यक्ति व्रताराधना करें तो एक पचरंगी तप पूर्ण होता है।

(१८) **धर्म चक्र**—४२ व्यक्ति एक साथ बेला करें तथा एक अन्य व्यक्ति तेला करे तो एक धर्म चक्र होता है।

(१९) **आयम्बिल ओली व्रत**—अरिहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यग् चारित्र और तप इन नौ पदों से सम्बन्धित व्रत नवपद या सिद्ध चक्र या आयम्बिल ओली व्रत कहलाते हैं। चैत्र शुक्ला १ से ९ तक तथा आसोज शुक्ला एकम से नवमी तक नौ-नौ आयम्बिल किए जाते हैं। नवपद जी की ओली साढ़े चार वर्ष तक करने की मान्यता है। यथासम्भव नौ ही दिन आयम्बिल भिन्न-भिन्न पदार्थों से किए जाते हैं।

(२०) **मौन एकादशी**—मार्गशीर्ष शुक्ला एकादशी के दिन अनेक तीर्थंकरों के कल्याणक हुए हैं यथा—

(१) अठारहवें तीर्थंकर ने इसी दिन दीक्षा ली।

(२) उन्नीसवें तीर्थंकर के जन्म, दीक्षा और केवल इसी दिन हुए।

(३) इक्कीसवें तीर्थंकर को केवलज्ञान इसी दिन हुआ। इसी दिन पाँच भरत में, पाँच एरावत क्षेत्रों में, पाँच-पाँच सब मिलाकर पचास कल्याणक तथा अतीत और अनागत के भेद से डेढ़ सौ कल्याणकों से सम्बन्धित यह पर्व आराधना के लिए अति उत्तम माना जाता है। मौन सहित उपवास मार्गशीर्ष महीने की सुदी ग्यारस को करना चाहिए। ग्यारह वर्षों तक प्रति वर्ष मौन एकादशी का उपवास अथवा ग्यारह महीनों तक सुदी ग्यारस को किया जाना लाभकारी रहता है। तीर्थंकरों के कल्याणक की माला अवश्य फेरनी चाहिए।

(२१) **मेरू त्रयोदशी**—वर्तमान अवसर्पिणी काल के सुषमसुषमा नामक तीसरे आरे के तीन महीने पन्द्रह दिन बाकी रहे तब माघ बदी १३ के दिन प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव जी मोक्ष में पधारे। अढाई द्वीप में पाँच मेरू हैं प्रभु के साथ दस हजार मुनियों ने शैलेशीकरण करके मेरू जैसी अचल स्थिति को प्राप्त कर ली थी। साधक पूर्वकाल में रत्नों के मेरू रचकर व्रताधराना करते थे अब साकर के पाँच मेरू रचने का व्यवहार प्रचलित है।

(२२) **चैत्री पूर्णिमा व्रत**—मान्यता है कि पाँच करोड़ मुनिवरों के साथ इस दिवस को श्री सिद्ध गिरि जी पर पुण्डरीक स्वामी मोक्ष पधारे। श्री पुण्डरीक स्वामी भगवान ऋषभदेव के प्रथम गणधर थे। चैत्र मास की ओली का भी यह दिन है। पूर्णिमा पर्व तिथि भी है। त्रिवेणी रूप यह व्रत लाभदायक है।

(२३) **पञ्च कल्याणक तप**—यह व्रत एक वर्ष में भी पूरा होता है। इसमें १२० उपवास और १२० पारणा होते हैं, जिस-जिस तिथि में तीर्थंकर का कल्याणक हुआ हो उस तिथि का उपवास करना चाहिए। पाँच वर्ष में भी यह तप पूरा किया जाता है प्रथम वर्ष में तीर्थंकरों के गर्भ की तिथियों के २४ उपवास करे इसी प्रकार द्वितीय वर्ष में जन्म के २४, तीसरे वर्ष में संयम (तप) के २४, चौथे वर्ष केवल ज्ञान के २४ और पाँचवें वर्ष निर्वाण के २४ उपवास किये जाते हैं। निर्वाण कल्याणक के बेले करने पर २४ बेले और २४ पारणे होते हैं, इसे निर्वाण कल्याणक बेला व्रत कहते हैं।

(२४) **कर्मनिर्जरा व्रत**—यह व्रत आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी से प्रारम्भ होता है अर्थात् दर्शन विशुद्धि के निमित्त आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी का उपवास करना चाहिये। दर्शन विशुद्धि की भावना माननी चाहिए। 'ओं ह्रीं दर्शन विशुद्धये नमः' इस मन्त्र का जाप करना चाहिए। सम्यग्ज्ञान भावना के निमित्त श्रावण शुक्ला चतुर्दशी को उपवास करके सम्यग्ज्ञान भावना का चिंतवन करना चाहिए। 'ओं ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय नमः' इस मंत्र की माला फेरनी चाहिए।

सम्यक्चारित्र के लिए भाद्रपद शुक्ला चतुर्दशी को उपवास करके सम्यक्चारित्र भावना का चिंतवन करे। 'ओं ह्रीं सम्यक्चारित्राय नमः' इस मंत्र की माला फेरनी चाहिए।

सम्यक् तप के निमित्त आसोज शुक्ला चतुर्दशी को उपवास करके तप की भावना का चिंतवन करना तथा 'ओं ह्रीं सम्यक् तपसे नमः' मंत्र की माला फेरनी चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२५) **नवनिधि व्रत**—नवनिधियों की नव नवमियों के उपवास ४ माह और एक पक्ष में करके फिर रत्नत्रय के तीन उपवास तीन तीजों को डेढ़ माह में करें। पाँच ज्ञान के उपवास पंचमी को ढाई महिने में करना चाहिए। चौदह रत्नों के उपवास किसी भी मास की चतुर्दशी से प्रारम्भ किए जा सकते हैं, सात माह में १४ चतुर्दशियों के उपवास करना चाहिए इस प्रकार एक वर्ष ३ माह और एक पक्ष में यह नव विधि व्रत पूर्ण होता है।

(२६) **अशोक वृक्ष तप व्रत**—अषाढ़ शुक्ला पड़वा, दोज, तीज, चौथ और पंचमी तक एकासना तथा आयम्बिल एक वर्ष तक हर माह में किये जाते हैं, मनोनिग्रह के लिये यह व्रत किया जाता है।

(२७) **षड्काय आलोचना तप व्रत विधि**—एकेन्द्रिय का एक उपवास, बेइन्द्रिय के दो उपवास, तेइन्द्रिय का तेला, चतुरेन्द्रिय का चोला तथा पंचेन्द्रिय का पंचोला और समुच्चय छः काय का छः उपवास करना चाहिए। 'खामेमी सव्वे जीवा······न केणई' इस गाथा का साढ़े बारह हजार जप करना चाहिए।

(२८) **पंचामृत तेला तप व्रत**—किसी भी मास की शुक्ल पक्ष की पड़वा से पाँच तेले किये जाते हैं। पारणे के लिए अभिग्रह रखने की मान्यता है।

(२९) **पाक्षिक तप व्रत विधि**—शुभ दिन, मुहूर्त, वार देखकर गुरुमुख से पखवासा तप ग्रहण करे और शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से पूर्णमासी तक लगातार पन्द्रह दिन के उपवास करे यदि एक साथ में १५ उपवास करने की शक्ति न हो तो प्रथम माह में सुदी प्रतिपदा को, दूसरे माह में बीज को इस तरह पन्द्रहवें दिन सुदी १५ को व्रत पूर्ण करे, प्रत्येक व्रत के दिन पौषध करके देवसी-रायसी प्रतिक्रमण करना चाहिए। मुनिसुव्रत स्वामी का सवा लक्ष जप मौन सहित करना चाहिए।

(३०) **दीपावली व्रत**—कार्तिक कृष्णा अमावस्या को तीर्थंकर महावीर ने निर्वाण पद प्राप्त किया था, उन्होंने निर्वाण से पूर्व निरन्तर १६ प्रहर तक धर्मदेशना दी थी, स्मृति स्वरूप दीपावली के दिन उपवास किया जाता है। यदि दीपावली अमावस्या की हो तो तेरस से तथा चतुर्दशी की हो तो बारस से तेला व्रत कई मुनिराज व श्रावक करते हैं। दीपावली पर तेला करना अत्यन्त शुभ माना जाता है।

(३१) **कषाय-जय तप व्रत विधि**—क्रोध, मान, माया और लोभ इन चारों कषायों के अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यानी, प्रत्याख्यानी और संज्वलन की चौकड़ियों के चार चार भेद करने से कषायों के सोलह भेद होते है। इन सोलह कषायों को जय करके प्रकृतियों की उपशान्ति के लिये एकासन निविगय, आयम्बिल उपवास इस प्रकार सोलह दिन तक तप करे। 'ओ३म निरंजनाय नमः' इस पद के सवालक्ष जप मौन युक्त करना चाहिए।

(३२) **तीर्थंकर गोत्र कर्मोपार्जन करने की तप व्रत विधि**—इस तप को किसी भी मास की शुक्ला प्रतिपदा से प्रारम्भ करना चाहिए। एक ओली को जघन्य दो मास में और उत्कृष्ट ६ मास में पूर्ण करे। यदि ६ मास में ओली पूर्ण नहीं कर सके तो ओली गिनती में नहीं गिनी जाती। बीसों ओलियों के बीस भेद हैं। चाहे बीसों दिन में एक ही पद जपें चाहे अलग-अलग। यथासम्भव जिस पद की ओली हो उसी पद की माला फिरानी चाहिए। तेले की शक्ति होने पर तेले से अथवा बेले से और बेले से भी सम्भव न हो तो चौविहार या तिविहार उपवास करके व्रताराधना करनी चाहिए। शक्ति न होने पर आयम्बिल तथा एकासना भी किये जा सकते हैं। चारसौ तेले या बेले या उपवास करने से इसकी बीस ओलियाँ पूर्ण होती हैं जिस पद में जितने गुण हों उतने ही लोगस्स का कायोत्सर्ग करना चाहिए। पद के गुणों का हृदय में स्मरण कर उदात्त स्वर से स्तुति करनी चाहिए। तप पूर्ति पर दयाव्रत पलाकर संस्थाओं को यथाशक्ति सहायता देनी चाहिए। इस प्रकार बीसों पदों की आराधना करने वाली आत्मा तीर्थंकर गौत्र कर्मोपार्जन करती है।

बीसों पदों की २१-२१ मालाएँ फेरनी चाहिए तथा प्रत्येक पद के साथ 'ओम् ह्रीं' लगाना चाहिए पद और उनके गुणों की सारणी इस प्रकार है—

(१) नमो अरिहंताणं	१२
(२) नमो सिद्धाणं	८
(३) नमो पवयणस्स	१५
(४) नमो आयरियाणं	३६

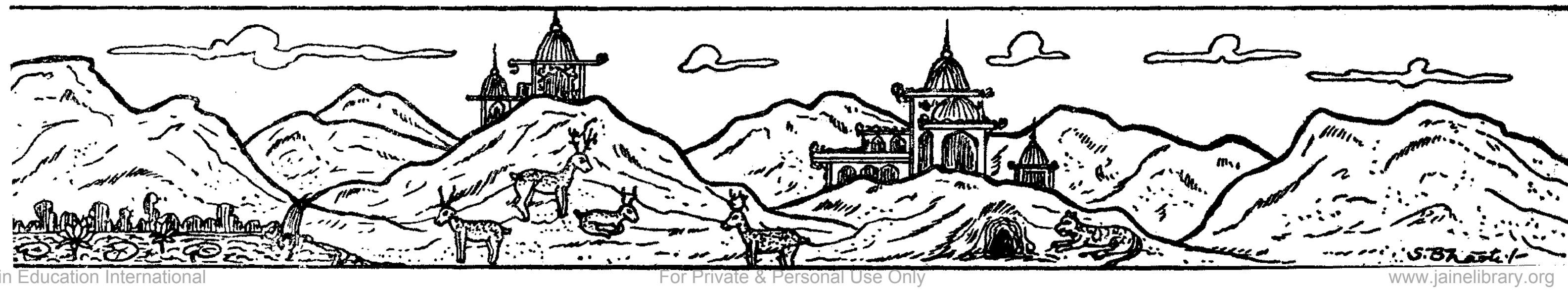

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(५)	नमो थेराणं	१५
(६)	नमो उवज्झायाणं	२५
(७)	नमो लोए सव्वसाहूणं	२७
(८)	नमो नाणस्स	५
(९)	नमो दंसणस्स	१७
(१०)	नमो विनय संपन्नाणं	१०
(११)	नमो चरित्तस्स	५
(१२)	नमो बम्भवयधारीणं	९
(१३)	नमो किरियाणं	२५
(१४)	नमो तवस्सीणं	१५
(१५)	नमो गोयमस्स	१७
(१६)	नमो जिणाणं	१०
(१७)	नमो चरणस्स	१२
(१८)	नमो नाणस्स	५
(१९)	नमो सुयनाणस्स	१०
(२०)	नमो तित्थयरस्स	५

यों तो अनशन तप से सम्बन्धित कई व्रत और भी हैं किन्तु मुख्य-मुख्य व्रतों का संकलन इस निबन्ध में किया गया है।

प्रत्येक तप में माला फेरना चाहिए। व्रत के पूर्ण होने पर धर्म लाभ (दानादि) शक्ति व सामर्थ्यानुसार करना चाहिए। तप से आत्मा निर्मल होती है क्योंकि आत्मा के शत्रु क्रोधादि कषाय को तप समाप्त कर देते हैं। कर्मों की निर्जरा इससे होती है। तप के विषय में विस्तृत जानकारी एवं शास्त्रीय परिभाषाएं समझने के लिए—'जैन धर्म में तप: स्वरूप और विश्लेषण' (श्री मरुधर केसरी) पुस्तक अवश्य पढ़ना चाहिए।

तप व्रताराधन अतिचारों से मुक्त रहना चाहिए। संसार वर्धन के लिये व्रताराधना की आवश्यकता नहीं है क्योंकि वह तो अपने आप हो ही रहा है। संसार के भोगोपभोगों से आत्मा क्षोभ व संक्लेश परिणामों से संयुक्त होता है अत: आत्म जागृति ही इसका परम लक्ष्य होना चाहिए। चित्त की आकुलता से अस्थिर भावों के कारण तप व्रत निर्मल नहीं हो पाता है अत: चित्त की स्थिरता तथा व्रतों को भार न मानकर ही व्रत करने चाहिए। तपों का मुख्य प्रयोजन यह होना चाहिए कि आत्मा अपने स्वभाव को जानने का प्रयास करे। उसे धीरे-धीरे यह ज्ञान हो कि जिस शरीर के आश्रित मैं हूँ अथवा संसार के प्राणी मेरे आश्रित हैं वह एक स्वप्न से अधिक नहीं है।

शुभ कर्मों का फल भी शुभ होगा और अशुभकर्मों का फल अशुभ होगा यानि जैसी करनी वैसी भरनी। पूर्व जन्म के शुभकर्मोदय से हमें आर्य क्षेत्र, मनुष्य शरीर, उत्तमकुल और निर्ग्रन्थ धर्म की प्राप्ति हुई है, तो वीतराग वाणी पर श्रद्धा रखकर इन्द्रिय और मन को आत्मा के वशवर्ती बनाना चाहिए। तप के बारह भेद अनशन से प्रारम्भ होते हैं, अनशन बाह्य तप का भेद होते हुए भी यदि इसे बाल-तप संज्ञा से मुक्त रखा जाय तो इसे स्वीकार करने वाली आत्मा हल्की होती जाती है, प्रायश्चित्त आदि तप को सहज बनाने के लिए अनशन तप परमावश्यक है क्योंकि मन और इन्द्रियाँ जब भूख-तृषा आदि पर विजय प्राप्त कर लेती हैं तो अन्य परिषहों को जय करना सरल हो जाता है, इसीलिए जैन धर्म में अनशन को नींव का पत्थर कहकर इसे महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है।

☆☆

Jain Education International
For Private & Personal Use Only
www.jainelibrary.org